रात्रि सूक्तम

नवरात्रि में माँ दुर्गा की साधना में देवी सूक्त का पाठ बहुत फलदायी होता हैं। देवी शक्तियों से ओतप्रोत देवी सूक्त का पाठ साधक की हर मनोरथ को पूरी करता है, किसी कार्य में आने वाली अड़चनो को दूर करता है, मानसिक संताप दूर करता है, धन, ऐश्वर्य और वैभव देकर आनंद और शांति देता है।

नवरात्र में शक्ति साधना व कृपा प्राप्ति का सरल उपाय देवी-सूक्त का पाठ है। देवी सूक्तम् ऋग्वेद का एक मंत्र है जिसे अम्भ्राणी सूक्तम् भी कहते हैं। इसमें 8 श्लोक हैं। यह वाक् (वाणी) को समर्पित है।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।

अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा॥1॥

ब्रह्मस्वरुपा मैं रुद्र, वसु, आदित्य और विश्वदेवता के रुप में विचरण करती हूँ, अर्थात् मैं ही उन सभी रुपो में भासमान हो रही हूँ। मैं ही ब्रह्मरुप से मित्र और वरुण दोनों को धारण करती हूँ। मैं ही इन्द्र और अग्नि का आधार हूँ। मैं ही दोनो अश्विनी कुमारों का धारण-पोषण करती हूँ।

अहंसोममाहनसंबिभर्म्यहंत्वष्टारमुतपूषणंभगम्।

अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते॥2॥

मैं ही शत्रुनाशक, कामादि दोष-निवर्तक, परमाल्हाददायी, यज्ञगत सोम, चन्द्रमा, मन अथवा शिव का भरण पोषण करती हूँ। मैं ही त्वष्टा, पूषा और भग को भी धारण करती हूँ। जो यजमान यज्ञ में सोमाभिषव के द्वारा देवताओं को तृप्त करने के लिये हाथ में हविष्य लेकर हवन करता है, उसे लोक-परलोक में सुखकारी फल देने वाली मैं ही हूँ।

अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।

तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम्॥3॥

मैं ही राष्ट्री अर्थात् सम्पूर्ण जगत् की ईश्वरी हूँ। मैं उपासकों को उनके अभीष्ट वसु-धन प्राप्त कराने वाली हूँ। जिज्ञासुओं के साक्षात् कर्तव्य परब्रह्म को अपनी आत्मा के रुप में मैंने अनुभव कर लिया है। जिनके लिये यज्ञ किये जाते हैं, उनमें मैं सर्वश्रेष्ठ हूँ। सम्पूर्ण प्रपञ्चके रुप में मैं ही अनेक-सी होकर विराजमान हूँ। सम्पूर्ण प्राणियों के शरीर में जीवनरुप में मैं अपने-आपको ही प्रविष्ट कर रही हूँ। भिन्न-भिन्न देश, काल, वस्तु और व्यक्तियों में जो कुछ हो रहा है, किया जा रहा है, वह सब मुझ में मेरे लिये ही किया जा रहा है। सम्पूर्ण विश्वके रुपमें अवस्थित होने के कारण जो कोई जो कुछ भी करता है, वह सब मैं ही हूँ।

मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणितियईं श्रृणोत्युक्तम्।

अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि॥4॥

eAstroHelp

जो कोई भोग भोगता है, वह मुझ भोक्त्री की शक्ति से ही भोगता है। जो देखता है, जो श्वासोच्छवास रुप व्यापार करता है और जो कही हुई सुनता है, वह भी मुझसे ही है। जो इस प्रकार अन्तर्यामिरुपसे स्थित मुझे नहीं जानते, वे अज्ञानी दीन, हीन, क्षीण हो जाते हैं। मेरे प्यारे सखा! मेरी बात सुनो, मैं तुम्हारे लिये उस ब्रह्मात्मक वस्तुका उपदेश करती हूँ, जो श्रद्धा-साधन से उपलब्ध होती है।

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः।

यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम्॥5॥

मैं स्वयं ही ब्रह्मात्मक वस्तु का उपदेश करती हूँ। देवताओं और मनुष्यों ने भी इसी का सेवन किया है। मैं स्वयं ब्रह्मा हूँ। मैं जिसकी रक्षा करना चाहती हूँ, उसे सर्वश्रेष्ठ बना देती हूँ, मैं चाहूँ तो उसे सृष्टि कर्ता ब्रह्मा बना दूँ और उसे बृहस्पति के समान सुमेधा बना दूँ। मैं स्वयं अपने स्वरुप ब्रह्मभिन्न आत्मा का गान कर रही हूँ।

अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ।

अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश॥6॥

मैं ही ब्रह्मज्ञानियों के द्वेषी हिंसारत त्रिपुरवासी त्रिगुणाभिमानी अहंकारी असुर का वध करने के लिये संहारकारी रुद्र के धनुष पर प्रत्यञ्चा चढाती हूँ। मैं ही अपने जिज्ञासु स्तोताओं के विरोधी शत्रुओं के साथ संग्राम करके उन्हें पराजित करती हूँ। मैं ही द्युलोक और पृथिवी में अन्तर्यामिरुप से प्रविष्ट हूँ।

अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन् मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे।

ततो वि तिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोप स्पृशामि॥7॥

इस विश्वके शिरोभाग पर विराजमान द्युलोक अथवा आदित्य रुप पिता का प्रसव मैं ही करती रहती हूँ। उस कारण में ही तन्तुओं में पटके समान आकाशादि सम्पूर्ण कार्य दीख रहा है। दिव्य कारण-वारिरुप समुद्र, जिसमें सम्पूर्ण प्राणियों एवं पदार्थों का उदय-विलय होता रहता है, वह ब्रह्मचैतन्य ही मेरा निवास स्थान है। यही कारण है कि मैं सम्पूर्ण भूतों में अनुप्रविष्ट होकर रहती हूँ और अपने कारण भूत मायात्मक स्वशरीर से सम्पूर्ण दृश्य कार्य का स्पर्श करती हूँ ।

अहमेव वात इव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा।

परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना सं बभूव॥8॥

वायु किसी दूसरे से प्रेरित न होने पर भी स्वयं प्रवाहित होता है, उसी प्रकार मैं ही किसी दूसरे के द्वारा प्रेरित और अधिष्ठित न होने पर भी स्वयं ही कारण रुप से सम्पूर्ण भूत रुप कार्यों का आरम्भ करती हूँ। मैं आकाश से भी परे हूँ और इस पृथ्वी से भी। अभिप्राय यह है कि मैं सम्पूर्ण विकारों से परे, असङ्ग, उदासीन, कूटस्थ ब्रह्मचैतन्य हूँ। अपनी महिमा से सम्पूर्ण जगत् के रुप में मैं ही बरत रही हूँ, रह रही हूँ।

॥इति देवी सूक्त॥

eAstroHelp